इकाई 1 बच्चों का सामाजिक संसार

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देष्य

1.3 समाजीकरण को समझना

1.3.1 कुछ महत्वपूर्ण शब्द समझना

1.3.1.1 मानदंड और महत्व

1.3.1.2 अप्रत्यक्ष और प्रत्यक्ष समाजीकरण

1.4 बच्चा और उसका सामाजिक विष्व

1.4.1 परिवार

1.4.2 क्षेत्र, धर्म, जाति और वर्ग का प्रभाव

1.4.3 लिंग पहचान

1.5 विद्यालय और बच्चा

1.6 समकक्षियों का महत्व

1.7 संचार माध्यम : बच्चे का आभासी संसार

1.8 सारांष

1.9 इकाई के अंत में अभ्यास

1.10 बोध प्रष्नों के उत्तर

1.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

मानव एक सामाजिक प्राणी है और बच्चा जन्म से ही सामाजिक विष्व का अंग हो जाता है – ऐसा विष्व जिसमें परिवार, मित्र और समुदाय, सभी हैं। इसी विष्व में बच्चा कभी न समाप्त होने वाले संबंध बनाता है जिनका आधार प्रेम, अधिगम और विकास होते हैं। बच्चे के लिए यह सदैव बढ़ते रहने वाला विष्व है जहाँ वह घर से विद्यालय, वहाँ से कार्य और नागरिकता की ओर बढ़ता है। इसे समझने के लिए आवष्यक मुद्दा यह है कि परिवर्तियों की पारस्परिक जटिल अन्तःक्रिया बच्चे के विष्व में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से कार्य करती है। इस इकाई में हम बच्चे के विष्व को ऐसे विष्व के रूप में समझने का प्रयास करेंगे जिसमें वह रह रहा है, बढ़ रहा है और प्रत्यक्ष रूप से अंतःक्रिया कर रहा है। ऐसा विष्व जिसमें वह समुदाय के तरीके सीख रहा है।

कल्पना कीजिए बच्चे का विकास अंटार्टिका नाम के ठंडे उत्तरी ध्रुव में हो रहा है जहाँ पृथ्वी पूरी तरह से हिम से ढंकी होती है, उसके जीवन की तुलना बिहार में रहने वाले बच्चे से करें जहाँ नदियाँ बहती हैं।

दोनों बच्चों में क्या अंतर होगा? ये अंतर क्यों और कैसे आते हैं? नीचे पाँच अंतरों की सूची बनाइए और उनके कारण बताइएः

1)

2)

3)

4)

5)

आप देखेंगे कि ये अंतर भौतिक दषाओं में तीक्ष्ण अंतरों से संबंधित हैं – एक स्थान पर बहुत सर्दी है और दूसरे में नहीं है – बिहार में नदी के समीप गाँव में विभिन्न प्रकार की वनस्पतियाँ और पषु पाए जाते हैं जबकि उत्तरी ध्रुव में वनस्पति, यदि कोई है तो उसमें अधिक भिन्नता है। दोनों स्थानों में लोग भिन्न–भिन्न भोजन खाते हैं, वे भिन्न–भिन्न तरीके में भोजन पकाते हैं और भोजन भिन्न हैं, भाषा, वस्त्र, रीतिरिवाज और धार्मिक अनुष्ठान दोनों स्थानों में बहुत अधिक भिन्न हैं। आप ऐसे ही अंतर अन्य भौगोलिक क्षेत्रों में रहने वाले बच्चों में पा सकते हैं।

क्या यह आकर्षक नहीं है कि विष्व भर में बच्चे जो अपनी विकास अवस्था में प्रायः एक समान होते हैं, परन्तु इतना अधिक भिन्न होने के लिए भिन्न–भिन्न क्षमताएँ विकसित करते हैं। कुछ बच्चे हिंदी बोलना सीखते हैं और कुछ चीनी, कुछ दूसरों का अभिवादन करने के लिए नमस्ते और हाथ मिलाते हैं, कुछ लड़कियाँ साड़ी पहनना सीखती हैं और अन्य स्कर्ट या पर्दा, कुछ हाथ से खाते हैं तो कुछ चॉप स्टिक, या कॉटे (फोर्क) या चाकू से खाते हैं – अंतर अनंत हैं, कुछ को प्रेक्षण करना आसान है और दूसरों को नोट करना अधिक गहन होता है और तत्काल प्रेक्षण करना कठिन है जैसे सही और गलत की अवधारणा, महिलाओं के प्रति मनोवृत्ति, जन्म और मृत्यु की धार्मिक विष्वासों की अवधारणा, समानता की अवधारणा, इत्यादि।

1.2 उद्देष्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आपः

- समाजीकरण की प्रक्रिया समझ सकेंगे जिससे मनुष्य का बच्चा अपने समाज का सदस्य होने के लिए बड़ा होता है;
- बच्चे के सामाजिक विष्व और उसके तरीके समझ सकेंगे जिनमें ये बच्चे को प्रभावित करते हैं;
- बच्चे पर जाति, धर्म और स्थान का प्रभाव समझ सकेंगे;
- सामाजिक संरचना के रूप में लिंग के प्रभावों को समझ सकेंगे;
- सामाजिक व्यवस्था और समाजीकरण के अभिकर्त्ता के रूप में विद्यालय की महत्वपूर्ण विशेषताओं का प्रभाव समझ सकेंगे; और
- बच्चे के विकास पर सहपाठियों और संचार माध्यमों के प्रभाव के बारे में आलोचनात्मक समझ का विकास कर सकेंगे।

1.3 समाजीकरण को समझना

जैसे–जैसे नवजात षिषु बढ़ता है, वह अपने परिवेष, विशेष रूप से अपने परिवार, समुदाय, विद्यालय और संचार माध्यम से सीखता है और व्यवहार, प्रथाएँ तथा विष्वास आत्मसात करता है। इनमें से कुछ विष्वास और व्यवहार उसे वयस्कों द्वारा सीधे सिखाए जाते हैं, जबकि कुछ अन्य वह केवल प्रेक्षण द्वारा सीखता है। बहुधा इन प्रथाओं में से कुछ उसके जीवन का भाग बन जाती हैं कि बच्चे सहज रूप से ही इनसे प्रभावित होने लगते हैं। तकनीकी शब्दों में इस संपूर्ण प्रक्रिया को **समाजीकरण** कहा जाता है।

शब्द "**समाजीकरण**" का संबंध अंतःक्रिया की उस प्रक्रिया से है जिसमें व्यक्ति (नौसिखिया) अपने समूह के मानदंड, मूल्य, विष्वास, मनोवृत्ति और भाषा विशेषताएँ अर्जित करता है। इन सांस्कृतिक तत्वों को अर्जित करने के दौरान व्यक्ति के अपने 'स्व' और व्यक्तित्व का निर्माण होता है और उसे आकार प्राप्त होता है। इसलिए, समाजीकरण सामाजिक जीवन में दो महत्वपूर्ण मुद्दों का समाधान करता हैः एक पीढ़ी से अगली पीढ़ी में समाजीय निरंतरता और दूसरा मानव विकास।

जिस प्रक्रिया के माध्यम से बच्चा सामाजिक में मूल्यों और मानदंडों और समाज में रहने के तरीके आत्मसात करता है, वह **समाजीकरण की प्रक्रिया** कहलाती है। इससे अभिप्राय है कि किसी चीज को यह मन में इतनी गहराई से आत्मसात कर लेना कि वह व्यक्ति के व्यवहार का भाग बन जाती हैं। समाजीकरण मूलतः सदस्यों द्वारा समाज के तरीके सीखने की प्रक्रिया है। इसका यह अभिप्राय भी है कि बच्चा कुल मिलाकर, संस्कृति के सहभाजित अर्थों और मूल्यों को समझना सीखता है अर्थात जीवन में अपने व्यवहार पैटर्नों की दिषा निर्धारित करना सीखता है। बच्चा समाज में अन्य से सहभागित अर्थ और अपेक्षाएँ पहचानना सीखता है। इस प्रक्रिया में वह अपने आपको जैविक प्राणी से सामाजिक प्राणी के रूप में रूपांतरित करता है, जिससे उसमें समाज के स्वीकार्य सदस्य के रूप में अपनी पहचान विकसित होती है।

बोध प्रष्न

टिप्पणीः क) अपने उत्तर दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तरों को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

1) आपने 'समाजीकरण' के बारे में क्या समझा है, पाँच पंक्तियों में लिखिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

2) अपने बचपन के दो व्यक्तिगत उदाहरण दें। जब आप 5 और 10 वर्ष के बीच की आयु के थे तब आपने घर में क्या कुछ सीखा। विवरण दें कि आपने कैसे महसूस किया और सीख को कैसे कायम रखा?

....

....

....

....

....

समाजीकरण समाज के तौर तरीके सीखने से संबंधित है। अपने व्यक्तिगत उदाहरणों के आधार पर भी आप महसूस करेंगे कि सीखने की प्रक्रिया बच्चे पर प्रभाव डालती है। एक प्रकार से यह बच्चे की भावनाओं/संवेगों और अधिगम दोनों को प्रभावित करती है और उसके संज्ञानात्मक और मनोसामाजिक विकास को सुनिष्चित करते हुए उसके व्यक्तित्व का अभिन्न अंग बन जाती है।

विभिन्न अध्ययन शास्त्र इस प्रक्रिया के अलग–अलग पहलुओं पर बल देते हैं। नृविज्ञानी समाजीकरण को मुख्यतया **एक पीढ़ी से अगली पीढ़ी तक सांस्कृतिक संप्रेषण के रूप में** देखते हैं, कभी–कभी समाजीकरण के लिए सांस्कृतीकरण (enculturation) शब्द का प्रयोग करते हैं। दूसरी ओर मनोविज्ञानी संस्कृति के बारे में अधिगम की प्रक्रिया और व्यक्तिषः विकास के विभिन्न पहलुओं पर उसके प्रभाव के बीच अंतःसंबंध पर बल देते हैं।

अध्ययन किए गए समाजीकरण के पहलू के बारे में मनोविज्ञान के अंदर ही बहुत विविधता है। विकासात्मक मनोविज्ञानी विशेषकर पियाजे द्वारा प्रभावित मनोविज्ञानियों के अनुसार समाजीकरण संज्ञानात्मक विकास का विषय है जिसे विशेष रूप से सामाजिक प्रभाव और परिपक्वन के मिश्रण के रूप में देखा जाता है। दूसरी ओर, नैदानिक मनोविज्ञानी और व्यक्तित्व सिद्धांतवादी समाजीकरण को ऐसी प्रक्रिया के रूप में देखते हैं जिससे प्रारंभिक बचपन के अनुभवों के संदर्भ में कुछ गुणा विकसित हो जाते हैं। समाजषास्त्री समाजीकरण को मुख्य रूप से सामाजिक भूमिकाओं के अधिगम के रूप में देखते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में व्यक्ति अपने समूह की भूमिकाओं का अधिगम करते हुए और उसे आत्मसात करते हुए उसका अभिन्न सदस्य बना जाता है (ब्रिम, 1966)। कुछ समाजषास्त्री समाजीकरण को स्व–अवधारणा निर्माण के रूप में देखना पसंद करते हैं। आत्मीय और पारस्परिक संबंधों के संदर्भ में 'स्व' और 'पहचान' के विकास को समाजीकरण का केंद्रीय अंग समझा जाता है।

चूँकि अध्यापक के रूप में हम बच्चों के साथ बहुत घनिष्ठता से काम करते हैं, हम समाजीकरण को हम उस प्रक्रिया के रूप में समझने का प्रयास करेंगे जो बढ़ते हुए बच्चे पर प्रभाव डालती है, दूसरे शब्दों में 'संदर्भ' और 'मुख्य संबंधों' का बच्चे के विकास पर क्या प्रभाव पड़ता है।

हमने समाजीकरण के बारे में कुछ प्रारंभिक ज्ञान प्राप्त किया है, आइए, हम इसे विस्तार से समझने का प्रयास करें।

एमील दुर्खीम (Emile Durkheim) के अनुसार व्यक्तियों में विचार प्रक्रियाएँ समाजीकरण के दौरान विकसित होती हैं। **समाजीकरण वह तरीका है जिसमें ज्ञान एक पीढ़ी से अगली पीढ़ी को सम्प्रेषित किया जाता है।** सामाजिक एकता दृढ़ता के लिए समाज

द्वारा स्वीकृत या निर्धारित मानदंडों, मूल्यों और नियमों का अनुपालन आवष्यक है। सामाजिक रीति रिवाज, धार्मिक अनुष्ठान, सामाजिक समारोहों के रूप में परंपराएँ वे तरीके हैं जिनमें समूह एक–दूसरे के साथ बँधे होते हैं। विवाह, जन्म और मृत्यु आयोजनों, एवं धार्मिक उत्सवों जैसे अवसरों पर सामूहिक सहभागिता इसके उदाहरण हैं। बढ़ते हुए बच्चे के विभिन्न प्रकार से समुदाय के तरीके सिखाए जाते हैं।

समाजीकरण धीमी प्रक्रिया है जैसे–जैसे बच्चा बढ़ता है, कई अभिकरणों के माध्यम से समाजीकरण और पुनर्समाजीकरण होता है, समाजीकरण के अभिकर्त्ता समाज–समाज में भिन्न–भिन्न होते हैं। परंतु अधिकांष मामलों में परिवार समाजीकरण का मुख्य अभिकर्त्ता होता है, अन्य अभिकरणों की भूमिका संदर्भ के अनुसार परिवर्तित होती रहती है। उदाहरण के लिए, आधुनिक जटिल समाज में महत्वपूर्ण समाजीकारक अभिकरण षिक्षा संस्थाएँ और संचार माध्यम हैं जबकि प्राचीन समाजों में गोत्र और वंष अधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। समाजीकरण की प्रक्रिया जन्म से शुरु होती है। यह सतत प्रक्रिया है क्योंकि सामाजिक अधिगम कभी समाप्त नहीं होता है। परंतु बचपन सबसे अधिक महत्वपूर्ण चरण है क्योंकि बच्चा अपने परिवार और समाज के बहुत से मूल्यों, विष्वासों, मानदंडों और व्यवहार पैटर्नों को आत्मसात् करता है।

1.3.1 कुछ महत्वपूर्ण शब्द समझना

1.3.1.1 मानदंड और मूल्य

मूल्य वे विशेषताएँ या रीति रिवाज हैं जो समाज विशेष के सदस्यों द्वारा सम्मान के साथ स्वीकार की जाती हैं। वे इनके प्रति पूर्णतः समर्पित होते हैं। क्योंकि उनमें उनका दृढ़ विष्वास होता है समाज बहुधा इन्हें महत्व देता है। ये मूल्य पीढ़ियों से या सदियों से जीवन शैली के रूप में विकसित होते हैं। मूल्य प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों भी होते हैं, कभी–कभी मूल्य एक–दूसरे से टकराव में भी आ सकते हैं।

सामाजिक मानदंड सामाजिक मूल्यों से उत्पन्न होते हैं और दोनों अन्य प्रजातियों के सामाजिक व्यवहार से मानवीय सामाजिक व्यवहारों से विभेद करने का कार्य करते हैं। मानदंड वे माध्यम हैं जिनके माध्यम से मूल्यों को व्यवहार में विभक्त किया जाता है। साधारणतया मानदंड वे नियम और विनियम हैं जिनके अनुसार समूह आचारण करता है। इस प्रकार समूह व्यवहार के स्तर के रूप में मानदंड का उल्लेख किया जा सकता है। सामाजिक मानदंड लोगों के समूह द्वारा विकसित वे नियम हैं जो यह निर्दिष्ट करते हैं कि लोगों को विभिन्न स्थितियों में कैसा व्यवहार करना और नहीं करना चाहिए। सामाजिक मानदंड में प्रायः सभी कल्पनीय स्थितियाँ आती है जो स्तरों के अनुसार अलग अलग होती हैं। एक ओर ऐसी स्थितियाँ होती है जिनका संपूर्ण अनुपालन आवष्यक होता है और दूसरी ओर स्थितियाँ जहाँ विकल्प की बहुत स्वतंत्रता है। धर्म, रीति रिवाज, धार्मिक अनुष्ठान और नियम उस संस्कृति के महत्वपूर्ण भाग है जिसमें बच्चा बढ़ता है और समाजीकरण का अंग बनता है।

यह समझना चाहिए कि व्यक्ति एक समय पर ही विभिन्न संस्थाओं का सदस्य होता है। उदाहरण के लिए, बच्चा परिवार का सदस्य है। परंतु वह बिरादरी, खानदान आदि का बड़े समूह सदस्य भी हैं जिसमें वह जन्म या विवाह द्वारा संबद्ध होता है। वह विद्यालय या सहपाठी समूह का भी भाग होता है।

1.3.1.2 अप्रत्यक्ष और प्रत्यक्ष समाजीकरण

जैसा कि शब्द से स्पष्ट है, प्रत्यक्ष समाजीकरण वह है, जहाँ समाज में बच्चे का समाजीकरण करने के लिए प्रत्यक्ष स्पष्ट मार्गदर्षन और स्पष्ट रूप से उल्लिखित नियम और विनियम उपाय अपनाए जाते हैं जैसे दूसरी ओर अप्रत्यक्ष समाजीकरण अनकहे दिषा निर्देषों पर आधारित होता है जो अन्य उपायों से व्यक्त किए जाते हैं। परिवार प्रायः पुरुषों और महिलाओं में समानता की बात खुले आम कहते हैं परंतु दैनिक कार्यों में बिल्कुल विपरीत व्यवहार दिखाते हैं, उदाहरण के लिए, महिलाएँ परिवार में परिवार के अन्य सदस्यों के भोजन करने के बाद ही खाना खाती है, महिलाएँ माँसाहारी भोजन से वंचित रहती है, जबकि परिवार के अन्य सदस्य उसे खाते हैं, महिलाएँ पारिवारिक चर्चाओं में अपनी राय व्यक्त नहीं करती हैं। बाल षिषु या बालिका षिषु शीघ्रता से असमानता के इन अप्रत्यक्ष संदेषों को आत्मसात कर लेते हैं यहां तक कि वे इन प्रथाओं में कोई गलती नहीं देखते हैं।

विद्यालय अनेक प्रकार से इस **अप्रत्यक्ष समाजीकरण** को व्यवहार में लाते हैं, बहुधा इसे **प्रछन्न पाठ्यचर्या** के रूप में समझा जाता है। प्रछन्न पाठ्यचर्या का संबंध संगठन द्वारा सम्प्रेषित संदेषों और आधिकारिक विषयों के अधिगम के अलावा षिक्षा व्यवस्था के प्रचालन से है। प्रछन्न पाठ्यचर्या के संदेष सामान्यतया मनोवृत्ति, मूल्यों, विष्वासों और व्यवहार से संबंधित होते हैं। इस प्रकार असंख्य संदेष अप्रत्यक्ष रूप से सूचित किए जाते हैं। उदाहरण के लिए, प्रारंभिक विद्यालय स्तर के विज्ञान और गणित सबसे अधिक महत्वपूर्ण विषय हैं, यह स्पष्ट हो जाता है यदि इन विषयों के लिए अन्य विषयों से अधिक समय दिया जाता है और दोपहर बाद के समय के बदले मुख्य समय सुबह का कर दिया जाता है तथा अन्य विषयों या कौषल की अपेक्षा अधिक बार–बार परीक्षण किया जाता है। अन्य उदाहरणों में ये शामिल हैं – जैसे प्रातःकालीन सभा में क्या होता है, कक्षा में कौन कहाँ बैठता है यहाँ तक कि रूलर जिसे अध्यापक बार–बार प्रयोग करता है, बच्चों को संदेष देता है। प्रछन्न पाठ्यचर्या के संदेष एक–दूसरे के पूरक तथा प्रतिकूल भी और अधिकारक पाठ्यचर्या के विपरीत भी हो सकते हैं। विद्यालयों के प्रछन्न पाठ्यचर्या का मुख्य प्रयोजन विद्यार्थियों को विद्यालय तथा वृहत्तर समाज के साथ चलने के लिए तैयार करना है। दूसरे शब्दों में, प्रछन्न पाठ्यचर्या सामान्यतया यथापूर्व स्थिति बनाए रखने का कार्य करती है। विशेष रूप से प्रबल संस्कृति और विद्यमान सामाजिक–आर्थिक पदानुक्रम में। आप इस खंड की अगली इकाई में इस विषय के बारे में अधिक विस्तार से पढ़ेंगे।

बोध प्रष्न

टिप्पणीः क) अपने उत्तर दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तरों को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

3) निम्नलिखित वाक्यों को पूरा करके देखें कि हम पूर्ववर्ती अनुभागों में उल्लिखित अवधारणाएँ समझ गए हैं अथवा नहीं।

मानदंड से अभिप्राय है ....
....हैं।

मूल्य से अभिप्राय है ....
.... हैं।

समाजीकरण का अर्थ है ....
.... हैं।

1.4 बच्चा और उसका सामाजिक विष्व

बच्चा ऐसे विष्व में रहता है जिसका सदैव विस्तार होता रहता है। परिवार उसका निकटतम और आसन्न विष्व है जैसे जैसे वह बढ़ता है वह परिवार से बाहर विद्यालय, सहपाठी, समूह और पड़ोस को अपनाता है। मुद्रित (प्रिंट), टेलीविजन, फिल्म और इंटरनेट सहित संचार माध्यम भी अब बच्चे के जीवन में समान रूप से महत्वपूर्ण हो गए हैं। इनमें से प्रत्येक उसके समाजीकरण तथा विकास में महत्वपूर्ण योगदान करता है।

फिर भी यह स्मरण रखना चाहिए कि परिवार वृहत्तर सामाजिक संरचना का अंग है जो हमारे देष में जाति, वर्ग और धर्म जैसे परिवर्तियों द्वारा निर्धारित होता है। समाजीकरण जिसका अनुभव बच्चा अपने बचपन में करता है, इन परिवर्तियों के जटिल अन्योन्यक्रिया द्वारा निर्धारित होता है। उदाहरण के लिए, शहरी मध्यम वर्ग की बालिका का अनुभव निम्न जाति की ग्रामीण बालिका से भिन्न होंगे या जनजाति बालक जो सामाजिक कौषल सीखता है वे परंपरागत ब्राह्मण बालक के समाजीकरण कौषलों से बहुत भिन्न होंगे।

अध्यापक के रूप में समाजीकरण की उन प्रक्रियाओं को समझना आवष्यक है जिन्हें बच्चा अनुभव करता है। इससे अध्यापक को बच्चों को भलीभांति समझकर उपयुक्त कार्यनीति बनाने में सहायता मिलेगी। इसके अलावा, अध्यापक के रूप में हम दो मुद्दों के प्रति संवेदनषील होते हैं – बच्चे केवल एक–दूसरे से अलग हैं, कोई अच्छा या बुरा नहीं है। केवल यह है कि हम यह सोचने लगते हैं कि मुख्यधारा जीवन शैली या उच्च जाति/वर्ग या प्रमुख धर्म के विष्वास सबसे अधिक उपयुक्त और सही है। यह पाया गया है कि विद्यालय में बच्चों के अनुकूलन से संबंधित कई मुद्दे उसके विष्वास से उत्पन्न होते हैं। भारत जैसे विविधतापूर्ण देष में अध्यापक रूप में हमें बहुत अधिक विविध समूहों के बच्चों से मिलना होता है, यह आवष्यक है कि विद्यालय और कक्षा इन बच्चों को स्वीकार करे और उनकी आवष्यकताओं की पूर्ति करे। अभिप्राय यह है कि हमें विविधता का महत्व समझना चाहिए और उसे स्वीकार करना चाहिए।

दूसरा और महत्वपूर्ण स्मरणीय बिंदु यह विष्वास है कि बच्चा खाली बर्तन या साफ स्लेट की भाँति है जिस पर हमें काम करना है। घर में और समुदाय में समाजीकरण ने बच्चे को बहुत बातें सीखने में सहायता की है। यह ज्ञात करना विद्यालय का कार्य है कि बच्चा विद्यालय में अपने साथ क्या लेकर लाता है।

1.4.1 परिवार

जैसा कि पहले कहा है कि समाज के साथ बच्चे का पहला सम्पर्क परिवार के माध्यम से होता है। परिवार में बच्चा प्रेक्षण करना, अंतःक्रिया करना और दूसरों से संबंध बनाना सीखता है, यहाँ वह अपने जीवन में सबसे अधिक महत्वपूर्ण संबंधों का अनुभव करता है। परिवार बच्चे को न केवल दिन प्रतिदिन के व्यवहारों के अनुकूल बनाता है, जैसे कैसे खाते हैं, बैठते हैं, बाते करते हैं और व्यवहार करते हैं बल्कि अन्य बहुत–सी बातें भी बच्चे को सिखाता है। परिवार बच्चे को समाज में विद्यमान समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और ज्ञान देता है। इस विरासत में भाषा, साहित्य, लोक कथाएँ और पौराणिक कथाएँ, कला, संगीत, भोजन, कौषल और बहुत सी अन्य बातें शामिल हैं। भारत के संदर्भ में प्रायः परिवार में विस्तारित परिवार के सदस्य जैसे दादा–दादी, चाचा–चाची और चचेरे भाई बहन शामिल होते हैं। विस्तारित परिवार भी बच्चे के समाजीकरण में योगदान करता है क्योंकि यह उसे अपने संबंधों का विस्तार करने का अवसर प्रदान करता है, बच्चे के जीवन में विस्तारित परिवारों का महत्व सर्वमान्य है।

परिवार में या विद्यालय में बच्चे का अधिकांष समाजीकरण सुविचारित एवं सप्रयास होता है परंतु बहुत सी ऐसी बाते हैं जिन्हें बच्चा अचेतन रूप से सीखता है। दूसरे शब्दों में, माता–पिता बच्चे में कुछ व्यवहार पैटर्न और मूल्य सचेतन रूप से डालना चाहते हैं जिन्हें वे वांछनीय समझते हैं। वे इसे बच्चों का मार्गदर्षन कहते हैं, और यह कहकर करते हैं कि उन्हें ही मालूम है कि व्यवहार का कौन–सा रूप सही है और क्या अस्वीकार्य है। स्वीकार्य व्यवहार पुरस्कृत किया जाता है और अस्वीकार्य व्यवहार दंडित किया जाता है। बच्चे को उसके लिंग और आयु के अनुसार कार्य और उत्तरदायित्व सौंपे जाते हैं। इस प्रकार समूह जीवन का परिचय बच्चों को दिया जाता है। परंतु बच्चा भी अपने जीवन में महत्वपूर्ण लोगों – माता–पिता, चाचा और चाचियों – को देखकर सीखता है। कभी–कभी वे इनमें से कुछ व्यवहार और पैटर्न अनजाने में सीखते हैं। उदाहरण के लिए आपने देखा होगा कि कुछ बच्चे अपने पसंदीदा खेल या फिल्मी सितारों की तरह बोलना या व्यवहार करना सीखते हैं या आपने देखा होगा कुछ बच्चे धूम्रपान करने की आदत साथियों से सीखते हैं अपने नए अचेतन समाजीकरण का एक अन्य उदाहरण यह है कि बच्चे कुछ वर्ग या जाति के लोगों या राजनीतिक विचारों के बारे में राय या पूर्वग्रह बना लेते हैं। वे ऐसा केवल इसलिए नहीं करते, क्योंकि किसी व्यक्ति ने उनसे ऐसा कहा था अपितु उन्होंने बड़ों को अपनी राय और पूर्वग्रहों को कहते हुए सुना था।

आपने अनुभव किया होगा कि माता–पिता और आपके अन्य वयस्क संबंधी आपसे विशेष प्रकार का व्यवहार करते हैं, कुछ बहुत कठोर है जबकि कुछ अन्य मैत्रीपूर्ण परंतु कठोर थे। यद्यपि, अनुसंधान मनोविज्ञानी, बूमरिंड (Baumrind) ने पाया कि पालनपोषण की शैली भिन्न–भिन्न होती हैं और प्रत्येक बच्चे को भिन्न प्रकार से प्रभावित करती हैं। हमने इसके बारे में खंड 1 की सामाजिक विकास इकाई में पढ़ा है। हम इसके बारे में एक बार फिर पढ़ेंगे।

माता–पिता – बच्चे का संबंध

डायना बूमरिंड ने अपने अनुसंधान के माध्यम से पाया कि पालनपोषण की चार महत्वपूर्ण शैलियाँ होती हैं:

- अनुषासनात्मक रणनीति
- स्नेह और पोषण
- सम्प्रेषण शैलियाँ
- परिपक्वता और नियंत्रण की अपेक्षाएँ

इन शैलियों के आधार पर बूमरिंड ने सुझाव दिया कि अधिकांष माता–पिता ने पालनपोषण की तीन शैलियों में से एक को अपनाया है। आगे के अनुसंधान द्वारा पालनपोषण की चौथी शैली का सुझाव दिया गया (मेकोबी एवं मार्टिन, 1983)।

पहला, **अधिकारवादी पालनपोषण**, इसमें बच्चों से माता–पिता द्वारा स्थापित नियमों का पालन सख्ती से करने की आषा की जाती है। ऐसे नियमों का पालन न करने से बच्चों को दण्डित किया जाता है। अधिकारवादी माता–पिता इन नियमों के पीछे तर्क स्पष्ट करने में विफल हैं। यह स्पष्ट करने के लिए कहा जाए तो माता–पिता केवल उत्तर देते हैं, "क्योंकि मैंने ऐसा कहा था।" इस प्रकार के माता–पिता अत्यधिक अपेक्षाएँ रखते हैं, परंतु अपने बच्चों के प्रति संवेदी नहीं हैं। बूमरिंड के अनुसार, ये माता–पिता "आज्ञापालन और स्तर को महत्व देते हैं तथा किसी स्पष्टीकरण के बिना अपने आदेषों के पालन की अपेक्षा करते हैं"।

(1991) पालनपोषण का दूसरा प्रकार **अधिकारपूर्ण पालनपोषण** है, जो अधिकारवादी शैली की भाँति ही है। **अधिकारपूर्ण पालनपोषण** शैली में नियम और मार्गदर्षन निर्धारित किए जाते हैं जिनके बच्चों से पालन की अपेक्षा की जाती है। परंतु यह पालनपोषण शैली काफी अधिक लोकतांत्रिक है। अधिकारपूर्ण माता–पिता अपने बच्चों के प्रति अनुक्रियाषील होते हैं और उनके प्रष्नों को सुनने के लिए तैयार रहते हैं। जब बच्चे आषाओं को पूरा करने में असफल होते हैं ये माता–पिता अधिक प्रोत्साहन देते हैं और दंड देने के बजाए क्षमता का विकास करते हैं। बूमरिंड सुझाव देते हैं कि ये माता–पिता अपने बच्चों के आचरण के लिए स्पष्ट मानकों को तथा मॉनीटर करते हैं। वे स्वाग्रही होते हैं परंतु ताक झांक और रोक टोक करने वाले नहीं होते हैं। उनके अनुषासनात्मक तरीके सहयोगषील है न कि दंडात्मक। वे चाहते हैं कि उनके बच्चे स्वाग्रही तथा सामाजिक रूप से उत्तरदायी, स्वनियामक तथा सहयोगषील हों" (1991)।

तीसरे किस्म का पालनपोषण **अनुज्ञात्मक पालनपोषण** है, इस मामले में माता–पिता को कभी–कभी कृपालु (आसक्त) माता–पिता भी कहा जाता है। इन्हें बच्चे से बहुत कम अपेक्षाएँ होती हैं। ये माता–पिता विरले ही अपने बच्चों को अनुषासित करते हैं क्योंकि उन्हें परिपक्वता और आत्मनियंत्रण की आषाएँ अपेक्षाकृत कम होती हैं। साधारणतया अनुज्ञात्मक माता–पिता अपने बच्चों का पोषण करते हैं तथा उनके साथ सम्प्रेषण स्थापित किए रहते हैं। वे बहुधा उनके साथ माता–पिता के बदले मित्रवत् में व्यवहार करते हैं।

चौथा प्रकार **तटस्थ पालनपोषण** है, इस शैली को बहुत कम अपेक्षाओं, अल्प अनुक्रियाषीलता और थोड़ा सम्प्रेषण से पहचाना जाता है। यद्यपि ये माता–पिता बच्चे की बुनियादी आवष्यकताओं को पूरा करते हैं, परंतु साधारणतया बच्चे के जीवन से तटस्थ रहते हैं। चरम मामलों में ये अपने बच्चों की आवष्यकताओं को अस्वीकार या उपेक्षा भी कर सकते हैं।

पालनपोषण का प्रभावः बच्चे के विकास परिणामों पर पालनपोषण शैलियों का क्या प्रभाव होता है? बूमरिंड के 100 विद्यालय पूर्व बच्चों पर किए गए प्रारंभिक अध्ययन के अलावा, अनुसंधानकर्त्ताओं ने बच्चों पर पालनपोषण शैलियों के प्रभाव का पता लगाने के लिए कई अन्य अध्ययन किए जिनसे अनेक निष्कर्ष प्राप्त हुए।

- अधिकारवादी पालनपोषण शैलियों का बच्चों पर यह प्रभाव होता है कि वे आज्ञाकारी और प्रवीण होते हैं परंतु प्रसन्नता, सामाजिक क्षमता और आत्मसम्मान में कम स्तर के होते हैं।

- साधिकार पालनपोषण शैलियों के उपयोग के परिणाम स्वरूप बच्चे प्रसन्न, सक्षम और सफल होते हैं (मैकोब, 1992)।

- अनुज्ञात्मक पालनपोषण का बहुधा परिणाम यह होता है कि बच्चे प्रसन्नता तथा स्वनियामकता में कम स्तर के होते हैं। ये बच्चे अधिकारियों के साथ व्यवहार करने में कठिनाई महसूस करते हैं और विद्यालय में उनकी उपलब्धि भी कम होती है।

- तटस्थ पालनपोषण शैलियाँ जीवन के सभी क्षेत्रों में निम्नतम स्तर की हैं। इन बच्चों में आत्मनियंत्रण का अभाव होता है, अल्प आत्मसम्मान होता है तथा ये अपने सहपाठियों की अपेक्षा कम सक्षम होते हैं।

बूमरिंड का कार्य यह समझने में हमारी सहायता करता है कि काफी हद तक बाल वयस्क संबंधों का स्वरूप और पालनपोषण शैलियाँ बच्चों में गुणों के विकास को प्रभावित करती है। उदाहरण के लिए, यह स्पष्ट है कि जब वयस्क बच्चे से प्यार और प्रोत्साहनपूर्ण व्यवहार

करते हैं और नियम तथा अपेक्षाएँ स्पष्ट करते हैं, बच्चे से अन्योन्यक्रिया करते हैं और उसे सुनते हैं तभी बच्चा प्रसन्न और जिम्मेवार महसूस करता है। इस संबंध में काफी अनुसंधान उपलब्ध नहीं है कि भारतीय माता–पिता या परिवार बच्चों का पालन पोषण किस प्रकार करते हैं। वास्तव में, भारत में बहुत बच्चे विस्तारित परिवार में पलते हैं, परन्तु ऐसा माना जाता है कि बच्चे के विकास पर इसका प्रभाव अच्छा नहीं होता है।

इस बिन्दु पर यह विचारणीय विषय है कि भारत के संदर्भ में बहुत बच्चे विस्तारित बड़े परिवारों में पलते हैं जहाँ दादा–दादी, चाचा–चाची और चचेरे भाई बहन साथ रहते हैं।

विस्तारित परिवार में संबंध, अन्योन्यक्रियाएँ और बढ़ने का अनुभव एकल परिवारों के अनुभवों से बहुत भिन्न होता है। दुर्भाग्यवष, बड़े विस्तारित परिवारों में पलने वाले बच्चों के अनुभवों के बारे में अधिक अनुसंधान साहित्य उपलब्ध नहीं है।

बूमरिंड ने हमें माता–पिता बाल संबंधों का एक परिप्रेक्ष्य दिया, एक अन्य परिप्रेक्ष्य लब्धप्रतिष्ठ भारतीय विश्लेषक सुधीर कक्कड़ ने हमारे सामने प्रस्तुत किया है। कक्कड़ ने भारतीय सांस्कृतिक संदर्भ में माता–पिता बाल संबंधों को समझने का प्रयास किया था। उसके परिप्रेक्ष्य को पढ़ना और समझना रुचिकर होगा। उसकी पुस्तक से नीचे दो उद्धरण दिए गए हैं *"द इंडियन साइक"* (1996)।

आइए, इन्हें पढ़ें और समझने का प्रयास करें।

1.4.1.2 माता–पिता – बाल संबंध : भारतीय परिवारों के बारे में एक दृष्टि

शैशवावस्था की लम्बी अवधि के दौरान भारतीय बच्चा अपनी माँ से बहुत भावपूर्ण ढंग से और आत्मीयता से जुड़ा होता है" (कक्कड़, 1996, पृष्ठ 80)।

यह संबंध षिषु और उसकी माँ की शारीरिक निकटता (द्वारा प्रकट और) में प्रकट होता है। पाँचवे वर्ष तक या इससे भी अधिक वर्षों तक, रात्रि में माता के बगल में सोना भारतीय बच्चों के लिए आम बात है। दिन के दौरान वह सबसे छोटे को जिसे अधिक ध्यान की आवष्यकता होती है, अपनी कमर के बगल में और दूसरे को अपनी बाँह में रखती है और ऐसा तब भी करती है जब वह अपने पड़ोस में मिलने, बाजार में, खेतों में और अन्यंत्र जाती है।

लगातार पकड़े रखना, छाती से लगाना, गुनगुनना और बातें करना भारतीय षिषु और उसकी माँ के बीच संबंध की मुख्य विशेषताएँ हैं और इस प्रकार के संबंध की अवधि पष्चिमी विष्व से भिन्न है (कक्कड़, 1996, पृष्ठ 80)।

इस प्रकार भारतीय पारिवारिक जीवन के सिद्धांत अपेक्षा रखते हैं कि पिता पुत्र की उपस्थिति में अपने आप को नियंत्रित रखें और अपने पुत्र तथा अपने भाई के पुत्र के साथ समान रूप से व्यवहार करें। पिता और पुत्र के बीच नियंत्रण का सांस्कृतिक दृष्टि से निर्धारण भारत में बहुत व्यापक है, यह सांस्कृतिक मानदंड बनाने के लिए पर्याप्त है। आत्मकथात्मक विवरण में पिता, चाहे सख्त या कृपालु, उदासीन या स्नही हो, अनिवार्यतः रुखा रहता है (कक्कड़, 1996, पृष्ठ 131)।

दूरी और निष्पक्षता के अपेक्षित अग्रभाग के पीछे भारतीय पिता अपने पुत्र के लिए अपना प्यार व्यक्त करने हेतु संघर्षरत रहता है। पितृवत् प्यार भारत में अन्य समाजों की अपेक्षा कम नहीं है। फिर भी वास्तविकता यह है कि पुत्र अकस्मात "अच्छी" माँ से दूर होकर भी वह यह दृढ़ धारणा नहीं बना पाता कि वह अपने पिता से सतत् उससे सीख सकता है, प्यार प्राप्त कर सकता है और उस पर निर्भर रह सकता है। (कक्कड़, 1996, पृष्ठ 132)।

कक्कड़ बहुत जटिल परिघटना पर दृष्टिपात करता है जब वह भारतीय सांस्कृतिक प्रथाओं और भारतीय पहचान पर उनके प्रभावों को समझने का प्रयास करता है। अध्यापक के रूप में हमारे लिए बच्चों के पालन–पोषण की प्रथाएँ और उन विशेषताओं के प्रकार समझना बहुत आवष्यक है जो बच्चे में विकसित होती हैं, साथ ही यह पहचानना भी आवष्यक है कि कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं जो इन प्रथाओं के कारण विकसित नहीं हो पाती हैं।

चूँकि इस विषय पर अधिक साहित्य उपलब्ध नहीं है, इसलिए, आइए हम अपने स्वयं के बचपन का स्मरण करते हुए और उसके प्रभावों को देखते हुए स्वयं "वास्तविकता" समझने का प्रयास करें। पहले सोपान के रूप में निम्नलिखित अभ्यास पूरा करे, विचार यथासंभव सत्य होने चाहिए। यह हमारी स्मषतियों को रोमानी ढंग चढ़ाना नहीं है बल्कि पीछे मुड़ने और अनुभवों को समझने के बारे में हैं – दोनों प्रकार के अनुभव अच्छे और कम अच्छे।

बोध प्रष्न

टिप्पणीः क) अपने उत्तर दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तरों को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

5) विस्तारित परिवार के संबंध में अपने अनुभव लिखिए। इसमें एक बच्चे के रूप में अपने प्रमुख संबंधों व अधिगम के प्रकार पर प्रकाष डालें।

....

....

....

....

....

उपर्युक्त अभ्यास से आपको अपने बचपन के कुछ अनुभवों पर विचार करने और जीवन में कुछ अधिक सार्थक संबंधों की पहचान करने में सहायता मिलेगी परंतु हमारे परिवारों का दूसरा भी पहलू है। वृहत्तर समाज और श्रेणियों जैसे वर्ग, जाति और धर्म आदि भी परिवार के माध्यम से बच्चे को विकास की प्रक्रिया में प्रभावित करते हैं।

1.4.2 क्षेत्र, धर्म, जाति और वर्ग का प्रभाव

परिवार वृहत्तर समाज का भाग है और समाजीय संस्कृति, प्रथाओं और मानदंडों का काफी निरूपण करता है। बहुत से ऐसे परिवर्ती हैं जिनके इर्द गिर्द हमारे समाज में वर्ग अथवा श्रेणियाँ परिभाषित की जाती है। प्रत्येक श्रेणी के अपने मूल्य, धार्मिक अनुष्ठान और रीति रिवाज होते हैं। परिवार बहुश्रेणियों से संबंधित होता है जिनमें से प्रत्येक उसकी संस्कृति को परिभाषित करती है। हम इन श्रेणियों में से कुछ का परीक्षण नीचे करेंगेः

क्षेत्रः भारत में राज्य अधिकतर भाषायी आधार पर गठित किए गए हैं (जैसे, गुजरात, बंगाल, महाराष्ट्र)। प्रत्येक राज्य की पृथक भाषा तथा स्थानीय त्यौहार, लोक कथाएँ, भोजन, पहनावा, आदि हैं। परिवार और विषाल परिवेष बच्चों को विशिष्ट संस्कृति सम्प्रेषित करता है।

धर्मः धार्मिक प्रथाओं में रीति रिवाज, परम्पराएँ और सांस्कृतिक प्रथाएँ सम्मिलित होती हैं। उदाहरण के लिए, इसाइयों, हिंदुओं, सिखों और मुसलमानों के धार्मिक अनुष्ठान, रीतिरिवाज, पहनावा, धार्मिक प्रतीक भिन्न–भिन्न हैं। उदाहरण के लिए, पारम्परिक हिन्दू संस्कार बच्चे

के जीवन में महत्वपूर्ण सोपान होते हैं – जैसे नामकरण, अननप्रसन्न, विद्यारंभ, उपनयन, संस्कार आदि। ये एक प्रकार से बच्चे को समाज की बदलती हुई अपेक्षाओं के बारे में जानकारी देते हैं। मुसलमानों में दिन में पाँच बार नमाज पढ़ना और इसाइयों के लिए प्रत्येक रविवार को चर्च जाना या अपने अपने त्यौहार मनाने की परम्परा है। बाह्य धार्मिक कार्यों और प्रतीकों के अलावा धर्म नैतिक मूल्यों और आचार संहिता को दृढ़ता से प्रभावित करता है। बच्चों को परिवार द्वारा उनके जीवन के प्रारंभ से ही अपने धार्मिक प्रथाओं का अनुसरण करने में समाजीकृत किया जाता है।

जातिः भारत में जाति महत्वपूर्ण पहचान है। प्रत्येक श्रेणी की जातियाँ/उपजातियाँ होती हैं, जिनके अनूठे रीति रिवाज और धार्मिक अनुष्ठान होते हैं। जाति के विष्वासों और मानदंडों द्वारा बच्चे के लालन पालन की प्रथाएँ प्रभावित होती हैं। – क्या स्वच्छ है, क्या अस्वच्छ है, क्या पढ़ना है, कब पढ़ना है, क्या खाना है, क्या पहनना है, कौन–सी धार्मिक पुस्तक पढ़नी है, कब प्रार्थना करनी है और क्या प्रार्थना करनी है। ये प्रायः धर्म (समाज) द्वारा मिलकर निर्धारित किए जाते हैं। दुर्भाग्य से बच्चे का समाजीकरण जाति की परिभाषा के सोपानिक स्वरूप में विष्वास करने में किया जाता है। निम्न जाति क्या है, उच्च जाति क्या है, कौन अछूत हैं उनके साथ व्यवहार किस प्रकार किया जाए। बच्चा इसके बारे में जाने बिना प्रत्येक भेदभावपूर्ण प्रथा और विष्वास को आत्मसात करना प्रारंभ करता है।

वर्गः मुख्यतः आर्थिक आधार पर परिभाषित और वर्गीकृत शब्द का संबंध आम समूहों से है। इसलिए हम श्रमिक वर्ग, मध्य वर्ग, उच्च मध्य वर्ग तथा धनीवर्ग का प्रयोग विशेष समूहों के लिए करते हैं। प्रत्येक श्रेणी खास आय और सम्पत्ति समूह दर्षाती है। परंतु वर्ग अकेले आय के बारे में नहीं है बल्कि इसके अंतर्गत अन्य परिवर्ती आते हैं जैसे षिक्षा, पोषाहार, स्वास्थ्य सेवाओं की सुलभता या सुलभता का अभाव, उपभोग पैटर्नों, आश्रय की कोटि, विद्युतमाल का स्वामित्व, ज्ञान की सुलभता आदि। बच्चों पर वर्ग का प्रभाव अत्यधिक होता है। उदाहरण के लिए, मध्यम वर्ग के षिक्षित माता–पिता, बच्चों का इस प्रकार समाजीकरण करते हैं, जो विद्यालय में स्वीकार्य हो। माता–पिता और बच्चे का पारस्परिक सम्प्रेषण अधिक होता है, माता–पिता पढ़ते हैं, बातें करते हैं और बच्चों को काफी अधिक सुनते हैं। घर में बोली गई भाषा सुपरिष्कृत है और बच्चे में ज्ञानात्मक तथा प्रभावकारी संरचना का निर्माण करती है जो बच्चे के लिए विद्यालय में अच्छा निष्पादन करने तथा अनुकूल बनाने में सहायक होती है। इसमें आष्चर्य नहीं है कि इस क्षेत्र में अनुसंधान से स्पष्ट हुआ है। अनुकूलन और बेहतर उपलब्धि के मामले में मध्यम और उच्च मध्यम वर्ग के परिवारों के बच्चे काफी अच्छी स्थिति में होते हैं।

भारत बहुत अधिक स्तरीकृत समाज है, इसमें उसकी आबादी का काफी अधिक प्रतिषत गरीब है। यहाँ "सांस्कृतिक गरीबी" के संभावित अस्तित्व के बारे में साहित्य विभाजित है जो अनिवार्यतः सुझाता है कि लोग अपने विष्वासों, मनोवृत्ति और व्यवहार (जैसे आलसीपन, अकुषलता, बेईमानी, अपराधवृत्ति, बुद्धि के अभाव) के कारण ही गरीब होते हैं, और गरीब बने रहते हैं। इस संस्कृति में पैदा हुए बच्चे किसी उद्भावी अवसरों का लाभ लेने के या तो इच्छुक नहीं होते हैं या असमर्थ होते हैं इसलिए गरीबी का चक्र निरंतर चलता रहता है।[1] इसी प्रकार का मत – भारत में बहुत से व्यावसायिकों ने व्यक्त किए हैं जहाँ यह प्रायः कहा जाता है "वे कुछ नहीं जानते हैं, वे कुछ नहीं समझ सकते हैं" सत्य यह है कि गरीब परिवारों के बच्चों का भी बड़े पैमाने पर समाजीकरण होता है क्योंकि उनके भी अपने मानदंड, मूल्य और सांस्कृतिक प्रथाएँ होती हैं। अन्तर केवल यह है कि प्रमुख विचारधारा यह मानने में असमर्थ है। वास्तविकता यह है कि बच्चा क्या नहीं जानता है या क्या कुछ नहीं कर सकता है। इस पर ही बल दिया जाता है और यह जानने का प्रयास नहीं किया जाता कि वह क्या कर सकता है।

अध्यापक के रूप में यह आवष्यक है कि भिन्न–भिन्न पृष्ठभूमि के बच्चों को समझने के प्रयास किए जाएँ और उनके सकारात्मक पहलुओं के आधार पर विद्यालय को समावेषी बनाने के प्रयास किए जाएँ जहां विविधता का सम्मान होता हो।

1.4.3 लिंग पहचान

लड़कों और लड़कियों को लिंग भूमिका में रखना समाजीकरण का मुख्य भाग है। समाजीकरण की प्रक्रियाओं से अभिप्राय है "पुरुषत्व या नारीत्व" की सांस्कृतिक रूप से परिभाषित विशेषताओं का अधिगम और उन्हें व्यवहार में लाना है। यह बच्चों को यह बताकर किया जाता है कि स्वीकार्य लिंग भूमिका क्या है और क्या नहीं है और लिंग भूमिका के अनुरूप व्यवहार को पुरस्कृत किया जाता है और विपरीत व्यवहार को दण्डित किया जाता है। बच्चा भी परिवार में अन्य को देखकर उपयुक्त लिंग भूमिका सीखता है। रीतिरिवाज, धार्मिक अनुष्ठान, परंपरागत कहानियाँ और पौराणिक कथाएँ तथा मीडिया सभी बच्चे को परंपरागत रूप से स्वीकृत लिंग व्यवहार और भूमिका की ओर अभिमुख होने के लिए प्रेरित करते हैं।

अब तक यह भली–भाँति ज्ञात हो गया है कि यद्यपि "लिंग" जैविक वास्तविकता है, लिंग सामाजिक रचना है, जहाँ समाज महिलाओं के लिए व्यवहार, भूमिकाएँ और उत्तरदायित्व निष्चित करता है। हमारे समाज में महिलाओं की भूमिका और अधिकार अत्यधिक असमान हैं, प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं के साथ भेदभाव किया जाता है। भेदभाव जीवन के प्रारंभ से ही शुरु होता है, जब लड़का पैदा होता है तालियाँ बजा–बजा कर बहुत खुषियाँ मनाई जाती हैं, मिठाई बाँटी जाती है परंतु कन्या के पैदा होने पर ऐसा नहीं किया जाता है।

कक्कड़ (1996) सुन्दर ढंग से उस विधि का सार प्रस्तुत करता है जिसके अनुसार भारतीय परिवारों में लड़कियों का समाजीकरण किया जाता है। उनके कुछ विचार नीचे दिए गए हैंः

"हिन्दू महिला की पहचान उसके जीवन चक्र, बचपन, माता–पिता के परिवार में पुत्री के रूप में, अपने पति के परिवार में पत्नी और बहू के रूप में भूमिकाओं से विकसित होती है। बचपन से आगे उसकी पहचान उसके द्वारा अंगीकृत नारीत्व के रुढ़िगत आदर्षों की सार्वदेषिकता से विकसित होती है।"

"कम से कम मध्यम उच्च वर्ग महिलाओं में जिन्हें आज दबाई गई भावनाओं के कारण मनोचिकित्सा की आवष्यकता पड़ती है, उन्हें बहुधा इन विचारों का सामना करना पड़ता है कि " मैं एक लड़की हूँ और इसलिए महत्वहीन हूँ और खराब हूँ"।"

"भारतीय समाज में जैसा कि हम बाद में देखेंगे, पुत्री को उसके जन्म परिवार में अतिथि समझा जाता है, बाहरी व्यक्ति की तरह उसके साथ व्यवहार किया जाता है क्योंकि शीघ्र ही उसका विवाह हो जाएगा और हमेषा के लिए वह माँ को छोड़ देगी।"

समस्या दो तरीके की हैं, जबकि लड़कियों का समाजीकरण इस विष्वास में किया जाता है कि वे अधीनस्थ हैं और उनकी भूमिका पारिवारिक क्षेत्र तक ही सीमित है। लड़के यह विष्वास आत्मसात करते हैं कि वे श्रेष्ठ हैं और इसलिए संसाधनों, बेहतर व्यवहार और सत्ता के अधिकारी हैं। भले ही, लड़के परंपरागत रूप से महिलाओं से संबद्ध कार्य करना चाहते हो, परंतु उपहास के भय से ऐसा नहीं कर पाते। विद्यालय प्रायः परंपरानुसार कार्य करते हैं जैसे लड़कियों से सफाई और पानी भरने का काम करवाया जाता है उन्हें प्रष्न पूछने, बोलने या खेलने के अवसर नहीं दिए जाते हैं पाठ्यपुस्तकों में कहानियाँ और पाठ बहुधा इन्हीं भूमिकाओं को सुदृढ़ करते हैं।

इसलिए बदलती हुई लिंग भूमिकाओं से हमारा समाज अधिक न्यायसंगत बनेगा। बराबरी के लिए अधिक व्यापक दृष्टिकोण आवष्यक होगा, समुदाय में पुरुषों और महिलाओं के लिए साथ मिलकर काम करना आवष्यक होगा ताकि सोच और व्यवहार में परिवर्तन हो। इसलिए इस तरीके को संवेदनषील बनाना आवष्यक है। ऐसा परिवर्तन लाने के लिए संभवतः विद्यालय और कक्षाएँ सबसे अधिक स्वीकार्य स्थान हैं।

गतिविधि 1

आप अपने विद्यालय में परिवर्तन कैसे लाएँगे? नीचे लिंग संबंधी मुद्दे दिए गए हैं जो साधारणतया हमारे विद्यालयों में पाए जाते हैं। अपने सहयोगियों से निम्नलिखित कथनों पर चर्चा करें और उनमें से प्रत्येक पर उनके विचार ज्ञात करें। अपने विवरण में उल्लेख करें:

1) लड़कियाँ गणित में अच्छी नहीं होती हैं।

2) लड़के अगली पंक्ति में बैठेंगे और लड़कियाँ पिछली पंक्ति में बैठेगी।

3) लड़कियाँ शर्मीली होती हैं और अच्छी तरह से संप्रेषण नहीं कर सकती हैं।

4) लड़कियाँ कढ़ाई का काम करेंगी और लड़के खेल खेलेंगे।

5) लड़कियाँ उतना ही पढ़ेंगी जितने से वे अपने घर परिवार और बच्चों की देखभाल कर सकें और अपने माता–पिता को पत्र लिख सकें।

1.5 विद्यालय और बच्चा

विद्यालय बच्चे के संसार का महत्वपूर्ण भाग है और महत्वपूर्ण समाजीकरण संस्था है। हमें अपने विद्यालय के दिनों की कुछ बहुत प्रिय और कुछ कम प्रिय स्मृतियाँ हैं। यह विद्यालय में ही होता है कि हम घंटों तक शांत बैठना सीखते हैं, बारी लेते हैं, पंक्तियों में बैठते हैं, नियत कार्यों पर काम करते हैं आदि। कई ऐसी बातें भी हैं जो बच्चा विद्यालय में ही सीखता है – कुछ बहुत स्पष्ट रूप में सिखाई जाती है जबकि अन्य विद्यालय की संस्कृति के भाग हैं और बच्चा उन्हें आत्मसात कर लेता है क्योंकि वे विद्यालय वातावरण के भाग हैं। दूसरे शब्दों में, अधिगम सामग्री का रूप और विषय, विद्यालय की व्यवस्था, दैनिक कक्षा सामाजिक संबंध, पाठ्यचर्या की संरचना और गठन, विद्यालय स्टॉफ का रवैया। ये सभी मिलकर विद्यालय अनुभव का सृजन करते हैं जो बच्चे को अत्यधिक प्रभावित करता है। परंतु यह समझना आवष्यक है कि इन पहलुओं में से कोई भी तटस्थ नहीं है बल्कि उसका चयन सुविचारित विकल्प के रूप में होता है, जो बहुधा समाज में प्रमुख विचारधारा द्वारा निर्धारित होता है।

आइए, हम पुस्तक *रेसेस* (*Recess*) से नीचे कुछ उद्धरणों को पढ़ें। यह ऐसी पुस्तक है जिसमें लब्ध प्रतिष्ठ व्यक्ति अपने विद्यालय के दिनों को याद कर रहे हैं। नीचे प्रसिद्ध भारतीय लेखक नीरद चौधरी, का लिखा हुआ अपना संस्मरण है जब बच्चे के रूप में उसने किषोरगंज के विद्यालय से कलकत्ता के अभिजात वर्ग के विद्यालय में प्रवेष लिया था।

"हमारा नया शैक्षिक वातावरण पुराने से बिल्कुल भिन्न था। हमें छोटे कमरों में बंद कर दिया गया है जहाँ खुली जगह नहीं है आकर्षक इमारत की कमी के बावजूद किषोरगंज में हमारे विद्यालयी जीवन की यह अभिन्न विशेषता थी। परंतु बहुत लम्बे चौड़े स्थान से भी अधिक जो हमने खोया, वह था अनुषासन। वहाँ बाहरी प्रतिबंध बहुत थे। दरबान गेट पर खड़ा

रहता था। विद्यालय से भागना जोखिम भरा था। दोपहर के विश्राम के दौरान दरवाजे पर ताले लगाए जाते थे। यदि पाठ के दौरान गली में बैंड बजने लगता है तो कक्षा में एक भी बच्चा अपने स्थान पर नहीं रहता था। जब अध्यापक कक्षा में आता था बच्चे लापरवाही के साथ खड़े हो जाते थे, कुछ तो बैठे ही रहते थे, जबकि किषोरगंज में मॉनीटर खड़ा होता था और अभिवादन करने के लिए औपचारिक समादेष देता था और पूरी कक्षा एक साथ खड़ी होती थी, मुस्कराकर अभिवादन करती थी और तब तक नहीं बैठती थी जब तक षिक्षक बैठ जाओ नहीं कहता था। अध्यापकों के प्रति सम्मान की कमी भी थी किषोरगंज में हम अध्यापकों को पवित्र व्यक्ति के नज़र से देखते थे। परंतु कलकत्ता के बच्चे दम्भी थे अध्यापक का मजाक करते थे तथा चिढ़ाते थे। घर पर कलकत्ता के बच्चे अपने बड़ों के प्रति गृहकार्य करने के लिए उग्र होते थे और अपनी आर्थिक स्थिति के कारण ट्यूटर को घोर परिश्रम करना पड़ता था। वे आषा करते थे कि वह उनका गृहकार्य करें, आष्चर्य है कि अभिभावक भी ऐसा ही विचार रखते थे (पृष्ठ 57–58)

गतिविधि 2

ऊपर अनुच्छेद में चौधरी कलकत्ता में अपने नए विद्यालय की तुलना किषोरगंज में अपने पुराने विद्यालय से कर रहा है। क्या आप नए और पुराने विद्यालय के बीच तीन अंतर बता सकते हैंः

1)

2)

3)

कल्पना कीजिए किषोरगंज में पुराना विद्यालय बच्चों को कैसे प्रभावित करेगा? उपर्युक्त अभ्यास से हम क्या सीखते हैं? हमने सीखा कि विद्यालय और विद्यालय में जीवन बच्चे को प्रभावित करता है। हमें विद्यालय में क्या सिखाया गया, यह महत्वपूर्ण है परंतु विद्यालयी जीवन की संरचना और वातावरण भी बच्चे को प्रभावित करता है।

गतिविधि 3

नीचे कुछ विशेषताएँ दी गई हैं जिन्हें आप अपने विद्यार्थियों में विकसित करना चाहते हैं। आप अपना विद्यालयी जीवन कैसे बनाएँगे (विषय, षिक्षण विधि, षिक्षक छात्र संबंध, नियम, दिनचर्या, कोई अन्य) ताकि ये गुण विकसित हो। हमने आपको अपनी धारणा बनाने में सहायता के लिए मैट्रिक्स रूप में अभ्यास दिया है।

गुण	विषय	षिक्षण विधि	षिक्षक छात्र संबंध	नियम	दिनचर्या	कोई अन्य
विष्वास						
विविधता के लिए सम्मान						
लिंग संवेदनषीलता						
नागरिक उत्तरदायित्व						

उपर्युक्त अभ्यास आपको यह समझने में सहायता करेगा कि अध्यापक मात्र ऐसा व्यक्ति नहीं है जिसका काम केवल पाठ्यपुस्तक पढ़ाना नहीं है बल्कि बच्चे में अच्छे गुण उत्पन्न

करने में उसकी मुख्य भूमिका है। हमारे संविधान के लोकतांत्रिक मूल्यों के अनुरूप गुण हों और जो गुण बच्चे को उत्पादनकारी तथा उत्तरदायी नागरिक तथा गृहस्थ बनाए। हम विद्यालय की भूमिका के बारे में अगली कुछ इकाइयों में अधिक विस्तार से पढ़ेंगे।

1.6 समकक्षियों का महत्व

बच्चे के जीवन में समकक्षी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जैसे–जैसे बच्चा बढ़ता है, समूह का भाग बनता है। मित्रों का होना बच्चे के लिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। मित्र न केवल बच्चे की कुछ महत्वपूर्ण संवेगात्मक आवष्यकताएँ पूरी करते हैं। समकक्षियों और समूहों के द्वारा बच्चे विष्व को खोजते और समझते हुए अधिक समान संबंध विकसित करते हैं जिसके आधार पर आत्म धारणा बनती है। समाजीकरण में समकक्षियों का प्रभाव परिवार की अपेक्षा कहीं अधिक होता है। यह बिल्कुल सामान्य है खासतौर पर जब बच्चा किषोर अवस्था में प्रवेष करता है, कि वह साथियों से सीखकर विशेष प्रकार से बातचीत करने लगता है, वस्त्र पहनना शुरु करता है और समकक्षियों से तौर–तरीके सीखता है। समकक्षी समूह एक तरीके से उसे अपना संसार फैलाने में सहायता करता है वह भिन्न–भिन्न समूहों के बच्चों से अन्योन्यक्रिया करता है, भिन्न–भिन्न प्रकार का पठन पाठन, विचारधारा और संभावनाओं से परिचित होता है। यह उसके समकक्षी समूह का प्रभाव है जो उसे भिन्न–भिन्न भूमिकाएँ और विचारों को आजमाने का अवसर देता है।

यद्यपि, समकक्षी समूह का भाग होने के कई लाभ हैं, परंतु यह भी संभावना है कि समकक्षी समूह बच्चे को अनुचित व्यवहार की दिषा में ले जाए। इनके उदाहरणों में बच्चे का धूम्रपान करना, ड्रग लेना, छोटी मोटी चोरी करना, समकक्षियों के दबाव के कारण उग्र स्वभाव शामिल है।

बच्चों को दोस्तों की आवष्यकता होती है क्योंकि वे बच्चे के विकास में महत्वपूर्ण हैं, कई बार विभिन्न कारणों से बच्चे दोस्त नहीं बना पाते हैं या समूह का भाग नहीं बन पाते हैं। इसलिए इन बच्चों को समझना तथा उन्हें दोस्त बनाने में सक्षम बनाना बहुत आवष्यक है। कभी–कभी बच्चे उन बच्चों के लिए क्रूर होते हैं जो उनके जैसे नहीं हैं। अध्यापक के रूप में यह देखना रुचिकर है कि कक्षा में समूह और मित्रता किस प्रकार विकसित होती है और पैटर्न बदलते हैं। विशेषतया जब बच्चा उच्च प्राथमिक कक्षा में प्रवेष करता है। एक बार फिर हम *रिसेस* पुस्तक के उद्धरण देखें। इस बार प्रसिद्ध लेखक विक्रम सेठ अपना बचपन स्मरण करते हुए लिखते हैं:

"इस सब का एक भाग वास्तव में केवल किषोरवस्था का सामान्य तनाव और दबाव है, परंतु इसका एक अन्य भाग स्थान का वातावरण भी है। यह ऐसा स्थान था जहाँ केवल खेलकूद ही था जहाँ तक लड़कों का संबंध है मुझे मेरे सहपाठियों और सीनियरों द्वारा जाँचा गया और सताया गया क्योंकि पढ़ाई और अध्ययन में मेरी रुचि थी और उस समय खेलकूद में रुचि नहीं थी, उस समय गैग या समूह में शामिल होने की मेरी इच्छा नहीं थी – मेरे कद के कारण जैसा कि आप माइक के समायोजन से देख सकते हैं – और इन सबमें महत्वपूर्ण कारण था कि जब मुझे सताया जाता था तब मैं अत्यधिक उग्र हो जाता था।"

बोध प्रश्न

टिप्पणी: क) अपने उत्तर दिए गए रिक्त स्थान में लिखिए।

ख) अपने उत्तरों को इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

6) ऊपर दिया गया उदाहरण पढ़ें और विक्रम सेठ समूह का भाग क्यों नहीं बन पाए, इसके कारणों की पहचान करने कारणों की पहचान करने का प्रयास करें। यदि आप सावधानी से पढ़े तो आप कई जटिल कारणों और अतः सम्बद्ध मुद्दों की पहचान कर सकेंगे। कृपया अपना उत्तर नीचे लिखें।

....

....

....

....

....

....

7) अपनी कक्षा में बच्चों का प्रेक्षण करें, तीन बच्चों की पहचान करें जो किसी भी समूह के भाग नहीं हैं या मित्र नहीं बना सकते हैं। उनसे उनके माता–पिता और कक्षा में अन्य बच्चों से बात करें तथा मित्र बनाने या किसी समूह का सदस्य न बनने के कारण ज्ञात करें।

....

....

....

....

....

1.7 संचार माध्यम : बच्चे का आभासी संसार

आज के विष्व में बहुत प्रकार के संचार माध्यमों का सम्मोहक आकर्षण न केवल वयस्कों पर है बल्कि समान रूप से बच्चों पर भी है। यह न केवल टेलीविजन और फिल्में हैं बल्कि अब इंटरनेट और मोबाइल फोन भी है।

बच्चों के संबंध में प्रभाव बहुत तीव्र हो गया है क्योंकि वे प्रभावनीय अवस्था में हैं, इसलिए संचार माध्यमों की शोषणकारी शक्ति से शीघ्र प्रभावित हो जाते हैं। लगातार टेलीविजन देखने के स्पष्ट प्रतिकूल प्रभाव हैं जैसे आँखों में तनाव, निष्क्रियता, आलस्य, आदि। इसके अलावा मनोवैज्ञानिक प्रभाव भी हैं, चूँकि बच्चे विकास की प्रारंभिक अवस्था में होते हैं, इस मामले में वे जो कुछ देखते हैं, वह उनके विचारों और कार्यों को मूर्त रूप देता है। एक प्रकार से बच्चे प्रतिबिम्ब (छवि) और विषयवस्तु द्वारा समाजीकृत होते हैं, जो बहुत अवास्तविक होती हैं क्योंकि प्रायः लिंग, जाति, और धार्मिक रुढ़िबद्ध धारणाओं, हिंसा और समृद्धि का विकृत दिखावा तथा उपभोक्तावाद को ही प्रदर्षित किया जाता है। बच्चों के

लिए कुछ ही कार्यक्रम होते हैं, वे अनिवार्यतः कामिक पात्रों के रूप में छोटे बच्चों के लिए होते हैं।

उपलब्ध बाल कार्यक्रम के लक्ष्य उच्च मिडिल कक्षा के शहरी बच्चे होते हैं परन्तु वे कार्यक्रम उन्हें अधिक मनोरंजक नहीं लगते हैं, अतः वे अधिक समय तक उन्हें नहीं देखते हैं। इसलिए अधिकांष बच्चे (विशेषकर निम्न मध्यमवर्ग) या तो बालीवुड की फिल्में या हिन्दी सौप–ओपेरा देखते हैं। इन फिल्मों और टेलीविजन शो का बच्चों पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। बच्चों से सेक्सुअलिटी, लिंग भूमिका, हिंसा और समाज में वित्तीय हैसियत का महत्व की समझ उत्पन्न होने से पहले ही इन मुद्दों से संबंधित प्रष्न उनके मन में उठते हैं। उदाहरण के लिए, बालीवुड कहानी प्रायः सदा पुरुष महिला संबंध पर आधारित होती है, प्यार की कहानी के भिन्न–भिन्न आरूप होते हैं। लड़की को सुंदर, धनी, विपत्ति में फंसी युवती के रूप में दिखाया जाता है और अंततः सुदंर नायक तो उसे खलनायक से या खलनायक के परिवार के शडयंत्रों से बचाता है। इससे अधिक लोकप्रिय फिल्में "मारधाड़ प्रधान" होती हैं। ये युवाओं को सिखाती है कि किसी भी समस्या का हल करने का सही रास्ता हिंसा है। ऐसे सिनेमाओं में सेक्सुअल हिंसा की भी वकालत की जाती है। ऐसे सिनेमी मनोरंजन की आड़ में न केवल बच्चों के विकास में बल्कि लिंग भूमिका समझने में भी बाधक हैं क्योंकि यह महिलाओं को असहाय दृष्टि से दिखाता है। यह परिदृष्य टेलीविजन दृष्यों के भाग होते हैं। अधिकांष टेलीविजन में पारिवारिक ड्रामा, उच्च मध्य वर्ग का निरूपण, परंपरागत, हिंदू परिवार में महिलाओं को पुरुषों के अधीनस्थ दिखाया जाता है जो केवल पारिवारिक क्षेत्र से संबंधित अनंत धार्मिक और पारिवारिक कलहों से जुड़े हुए होते हैं। पोषाक और गहनों का महत्व पर भी प्रकाष डाला जाता है (कोई भी महिला पात्र जेवरात या श्रृंगार के बिना नहीं होती है। आधुनिक समाज में पुरुष और महिलाओं की ऐसी प्रस्तुति महिला की मुक्ति प्रयासों के संबंध में प्रतिभागी हैं। इसके अलावा ये शो समाज में साधारणतया जीवन में धन के महत्व पर भी बल देते हैं। धन समाज में उच्चतर स्थान प्रदान करना है और आर्थिक सुख की सुलभता देता है।

विज्ञापन भी संचार माध्यम में एक अन्य शोषणकारी क्षेत्र है, वे अपने उत्पादों की आकर्षक विशेषताएँ दिखाते हैं और समाज के खास भाग को ध्यान में रखते हैं जिसे इसकी सबसे अधिक आवष्यकता है। वे दर्षकों को विष्वास दिलाते हैं कि उनके उत्पाद उनकी प्रसन्नता के लिए हैं, इन्हें प्रयोग करने के बाद वे उसे प्राप्त करेंगे जिसे आप चाहते हैं। इसके अलावा, विज्ञापन अन्य संचार माध्यम की तुलना में संभवतः सबसे अधिक कपटपूर्ण और खतरनाक होते हैं क्योंकि वे सभी चैनलों, समाचारपत्रों, पत्रपत्रिकाओं आदि में हो सकते हैं, उनसे बचना असंभव है, सबसे अधिक विज्ञापन सामाजिक रुढ़िग्रस्तता का प्रयोग करते हैं, वे सौन्दर्य उत्पादों (वस्त्रों और उपसाधनों) के लिए महिलाओं को लक्ष्य करते हैं और आटोमोबाइल और गैजट के लिए पुरुषों के। वे महिलाओं की छवि पर बल देते हैं। यह दर्षाते हैं कि सुंदर महिला/बालिका वह है, जो छरहरी, सुंदर है और स्वच्छ चिकनी त्वचा है। ऐसी विशेषताएँ पुरुषों को आकर्षित करने और प्राप्त करने के लिए आवष्यक हैं जो इन विज्ञापनों के अनुसार महिलाओं के लिए मुख्य लक्ष्य हैं। दूसरी ओर पुरुषों को कहा जाता है कि सुंदर महिला को आकर्षित करने के लिए उनके पास अधिक तेज कार/बाइक और अधिक फेंसी गैजट होना चाहिए। इस किस्म के विज्ञापन संवेदनषीलता का दोहन करते हैं और वे बच्चों के दृष्टिकोण का निर्माण करते हैं कि पुरुष और महिलाएँ कैसी होनी चाहिए। इसके अलावा, इन उत्पादों को प्राप्त करने के लिए धन की आवष्यकता होती है क्योंकि ये विज्ञापन मौद्रिक और भौतिक सम्पत्ति की तुलना करते हुए प्रतीत होते हैं, ऐसे विज्ञापनों से बच्चों को भी नहीं छोड़ा गया है 35 प्रतिषत से अधिक विज्ञापन उन्हें लक्ष्य

करते हैं। पूँजीपतियों ने शीघ्र ही अनुभव किया कि वे बढ़ते हुए बाजार से लाभ अर्जित कर सकते हैं, वे उन हानियों से बेखबर रहते हैं जो उनसे हो सकती हैं। बच्चे दूसरों को इन विज्ञापनों में खुषी भरे बच्चों को देखते हैं, अपने पिता की लक्जरी कार में घूमते हैं, कीमती खिलौने खेलते हैं फेंसी कपड़े पहनते हैं, स्वादिष्ट भोजन करते हैं। उनमें से अधिकांष इन सुख साधनों के अनुभव लेने के लिए पर्याप्त सुविधा संपन्न नहीं होते हैं, वे विष्वास करते हैं कि वे जीवन का वास्तविक आनंद प्राप्त नहीं कर रहे हैं। इस प्रकार यह पूर्णतः स्पष्ट है कि विज्ञापन बच्चों के विकास के लिए अत्यधिक हानिकारक हैं क्योंकि यह केवल पूँजीपति की वास्तविकता का आरूप दिखाता है।

यह विचारणीय है कि बच्चों के लिए टेलीविजन और सिनेमा, समाचारपत्रों और पत्रपत्रिकाओं की भाँति उपयोगी नहीं होते हैं। परंतु यह वास्तविकता नहीं है। अधिकांष पत्रपत्रिकाएँ केवल (अधिकांष पाठकों को आकर्षित करने के लिए) सनसनीखेज कहानियाँ देते हैं। साधारणतया ये रक्तरंजित होती हैं, हत्या, बलात्कार, चोरी, भ्रष्टाचार आदि की खबरें होती हैं। इस माध्यम से बच्चे के जीवन के प्रारंभ में ही हिंसा उद्घाटित हो जाती हैं और वे देखते हैं कि यह अपरिहार्य है, बड़े दुष्ट संसार का महत्वपूर्ण भाग है। एक अन्य मुख्य विषय जो समाचारपत्रों और पत्रपत्रिकाओं का लगातार भाग है, वह बालीवुड और सेलिब्रेटीज का जीवन है। दर्षक इन सेलिब्रेटीज से जुड़ना और सम्बद्ध होना महसूस करते हैं। मीडिया वास्तविक महत्वपूर्ण मुद्दों जैसे गरीबी, भूखमरी, षिक्षा आदि पर चर्चा करने का कष्ट नहीं उठाता है। इसलिए बच्चे भी बड़ा होने पर उन्हें उपेक्षित करते हैं।

1.8 सारांष

इस इकाई में हमें बच्चों के सामाजिक संसार का विहंगावलोकन मिला और हमने समझा कि बच्चा समुदाय के स्वीकृत और सक्रिय सदस्य होने के लिए समुदाय के तरीके कैसे सीखता है। एक महत्वपूर्ण समझ है जो हमें होनी चाहिए, जिसे यह कहना है कि बच्चा इस प्रक्रिया में निष्क्रिय प्राप्तकर्त्ता नहीं है जहाँ उसे भिन्न–भिन्न एजेंसियों द्वारा समाजीकृत किया जाता है बल्कि इस अधिगम प्रक्रिया का सक्रिय सदस्य है।

बच्चे अपने सामाजिक संसार की भावना बनाने में सक्रिय भूमिका निभाते हैं और अपने सामाजिक समूह का भाग होने के अपने रास्ते स्वयं बनाते हैं। इस इकाई में हमने सीखा कि कई ऐसे तरीके और एजेंसियाँ हैं जिनसे बच्चा अपने सामाजिक परिवेष के बारे में सीखता है, प्रक्रिया अधिगम की है परंतु अन्योन्यक्रिया के माध्यम से वह आधारभूत गुण और विशेषताएँ विकसित करना सीखता है। खंड 1 की मनोसामाजिक विकास पर इकाई को बाल मनोसामाजिक विकास के सामाजिक संसार के बीच निकट संबंध समझने के लिए इस इकाई के संयोजन में देखा जाना चाहिए।

1.9 इकाई के अंत में अभ्यास

1) अपनी कक्षा में 5 लड़के और 5 लड़कियाँ चुनिए, उनका अलग–अलग साक्षात्कार लें और निम्नलिखित ज्ञात करें:

   - उनकी दिनचर्या
   - उनका दैनिक आहार (भोजन ग्रहण)
   - उनकी भावी योजना

यदि संभव हो अपने निष्कर्ष डायग्राम में दिखाए उनकी दिनचर्या और दैनिक आहार तथा भावी योजनाओं को पाई चार्ट में दिखाना अच्छा विचार हो सकता है। तीन आयामों में 5 लड़के और 5 लड़कियों के जीवन की तुलना करें। अंतर पर अपने प्रेक्षण लिखें इन अंतरों के कारण बताइए और स्थिति परिवर्तन करने के लिए क्या किया जा सकता है ताकि अधिक समानता विकसित हो।

2) वे तरीके बताइए जिनमें विद्यालय में लोकतंत्र और समानता का महत्व प्रोत्साहित किया जा सकता है।

3) आयु वर्ग 6 से 14 के बच्चों पर टेलीविजन सीरियलों के प्रभाव पर 300 शब्दों का निबंध लिखें।

1.10 बोध प्रष्नों के उत्तर

1) समाजीकरण का अर्थ अंतःक्रिया की उस प्रक्रिया से है जिसमें व्यक्ति अपने समूह के मानदंडों, मूल्य, विष्वास, मनोवृत्ति और भाषा विशेषताएँ अर्जित करता है। यह वास्तव में एक अधिगम प्रक्रिया है जिसमें समुदाय अपने सदस्यों को सिखाता हैं यह मस्तिष्क में कुछ ग्रहण करने/आत्मसातीकरण की प्रक्रिया है जो व्यक्ति के व्यवहार का अंग होती हैं। यह सामाजिक जीवन में दो महत्वपूर्ण मुद्दो का समाधान करती हैः (i) एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में सामाजिक निरंतरता, एवं (ii) मानव विकास। इस प्रक्रिया द्वारा बच्चा समाज में दूसरों की अपेक्षाएँ व अर्थ पहचानना सीखता है।

2) इसका कोई निष्चित उत्तर नहीं है, अपने अनुभव के आधार पर लिखें।

3) क) मानदंड के माध्यम है जिनसे मूल्यों को व्यवहार में व्यक्त करते हैं। इसमें सामान्यतः समूह द्वारा लिए जाने वाले नियम व प्रावधान आते हैं जैसे – बड़ों का आदर करना।

   ख) मूल्य वे विस्तृत प्राथमिकताएँ होती हैं जिनके अनुसार किसी व्यवहार या कार्य की अपेक्षा की जाती है। यह एक व्यक्ति की सही या गलत की पहचान या क्या होना चाहिए, को प्रदर्षित करता है। उदाहरण, हमारे शब्दों व कार्यों में विष्वास उत्पन्न करना व एकता प्रदर्षित करना।

4) अपने अनुभव लिखें।

5) रुचियों में विभिन्नता जैसे : खेलने के स्थान पर पढ़ना।

- समावेषित प्रकृति
- अपनी लम्बाई को लेकर संकोच
- अत्यधिक गरम दिमाग होगा, आदि

6) अपने अवलोकन लिखें।

1.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

गेकॉस विक्टर (2001), सोषलाइजेषन, एनसाक्लोपीडिया ऑफ सोषियोलॉजी (द्वितीय संस्करण) वेबसाइट http://edu.learnsoc.org/Chapters से लिया गया।

सोषियोलॉजी गाइडः ए स्टूडेंट गाइड टू सोषियोलॉजी, (खा) सोषल नार्मस, वेबसाइटः http://www.sociologyguide.com/basic-concepts/Social-Norms.php से लिया गया।

चेरी केन्द्रा (2012), *पैरिन्टिंग स्टाइल – द फोर स्टाइल्स ऑफ पैरिन्टिंग*, वेबसाइटः http://psychology.about.com/od/developmentalpsychology/a/parenting-style.htm से लिया गया।

कक्कड़, एस. (1996), *दि इंडियन साइको*, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली।

फैरी, थॉमस एवं वॉयडन जो. (2003), *चिल्ड्रन एंड पॉवरटीः ए रिव्यू ऑफ कॉन्टेम्पोरेरी लिटरेचर एंड थॉट ऑन चिल्ड्रन एंड पावर्टी*, सी.सी.एफ. चिल्ड्रन एंड पावर्टी : सीरीज – भाग 1, वेबसाइटः http://docs.google.com/www.childfund.org से लिया गया।

मेहरोत्रा, पी.के. (संपा.) (2008), *रेसे्स*, दिल्ली : पैग्विन बुक्स